खाड़ी युद्ध की परिणति : इराक का विभाजन लगभग तय

हिन्दुस्तान, 8.4.1991

सैनिक दृष्टि से इराक को कमजोर कर देने मात्र से ही अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज बुश को संतोष नहीं आ, अब वे न केवल अमरीका को आंख दिखाने की र्रत करने वाले सद्दाम हुसैन को, बल्कि समूचे इराक को ही बर्बाद करने पर तुले हैं। और उसमें भी मार्के की बात यह कि लड़ाई ठानने के लिए तो उन्हें अपने पश्चिमी खेमे के अन्य देशों की जरूरत थी लेकिन इराक को टुकड़े करके उसे महाशक्तियों की दया पर छोड़ देने की स्थिति में लाने के लिए जार्ज बुश अकेले खुद को ही पर्याप्त समझते हैं। इसलिए संयुक्त राष्ट्र स्थित ईरानी राजदूत ने जब महासभा के अधिवेशन में सद्दाम हुसैन पर आरोप लगाया कि वे खुर्दों के दमन के लिए रासायनिक हथियारों का इस्तेमाल कर रहे हैं तो कई देशों ने हस्तक्षेप करने की उत्सुकता जाहिर की लेकिन जार्ज बुश ने कहा कि इराकी समस्या का हल उन्हीं पर छोड़ दिया जाये और अपने गुट के सभी देशों को चेतावनी दे दी।

विद्रोह की आग भड़की है इराक के उत्तरी और दक्षिणी प्रान्तों में, जहां के निवासियों के साथ राष्ट्रपति सद्दाम की सत्तारूढ़ बाथ पार्टी ने कभी बेहतर सलूक नहीं किया। उसकी बड़ी वजह ये है कि सत्तारूढ़ कौम समेत इराक की किसी भी कौम का आपस में कोई सामंजस्य नहीं है और वे हर मायने (सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक) में एक-दूसरे से पृथक हैं। मध्य क्षेत्र में राजधानी बगदाद स्थित है, जहां के बहुसंख्यक अरब सुन्नी मुसलमान हैं। राजनीतिक और सैनिक दृष्टि से यह कौम इतनी दबंग है कि पिछले ३० वर्षों से शेष तमाम समुदाय के लोग उनकी अधीनता स्वीकार करके चलने को मजबूर हैं।

दक्षिण में शिया मुसलमान हैं जो सांस्कृतिक रूप से ईरान के और जातीय रूप से अरबों के करीब हैं। इराक में ५५ प्रतिशत आबादी शिया मुसलमानों की है लेकिन सरकार में उन्हें नाममात्र को ही प्रतिनिधित्व मिला हुआ है। मौजूदा इराकी नेतृत्व में सिर्फ एक ही व्यक्ति है जिनके नाम पर वे संतोष की सांस ले सकते हैं और वो हैं सद्दून हम्मादी जिन्हें हाल ही में (जब सद्दाम को लग गया था कि अमरीका के हाथों उनकी हार सुनिश्चित है) उप-प्रधानमंत्री के पद पर बिठाया गया है।

उत्तर में सुन्नी खुर्द बसे हुए हैं जो इस तरह यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं कि इस सदी के आरंभ से ही अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत उनके पास आज भी कहने के लिए न तो अपना कोई घर है न ठिकाना। खुर्द मूलतः आर्य जाति के लोग हैं और अरबों तथा तुर्कों से भिन्न हैं। वे तुर्की, सीरिया, सोवियत संघ और ईरान में भी फैले हैं और इन तमाम देशों में उनकी हैसियत शरणार्थियों जैसी है। उनकी सबसे ज्यादा आबादी तुर्की में है (१० मिलियन)। ताज्जुब है कि इतने वर्षों तक विभिन्न देशों की दया पर अस्तित्व में रहने के बावजूद वे इसी अन्य समुदाय के धर्म, रीति-रिवाज या रहन-सहन में हिल-मिल नहीं पाये और हर देश ने अपने-अपने हिसाब से उनका शोषण किया है।

ये समुदाय कई अन्य छोटे-छोटे गुटों में बंटे हुए हैं और अपने-अपने स्तर से आजादी पाने के लिए हरसंभव प्रयत्न करते रहे हैं लेकिन इराक में जितने भी हुक्मरान आये सबों ने उनकी आवाज बंद करने के लिए कोई कसर बाकी नहीं रखी। इसलिए विद्रोह कोई नया नहीं है, नया अगर है तो इराकी तानाशाह सद्दाम हुसैन का विद्रोह को कुचल देने का बिल्कुल अमानवीय तरीका जिससे खुर्द एकदम से नेस्तनाबूद हो गये। सद्दाम की सैनिक तानाशाही के विरोध में खुर्दों ने हथियार हाथ में लिये लेकिन चलने से पहले सद्दाम ने हथियार समेत तोपों और टैंकों से भून दिया। इतना ही नहीं, १९८५ में इससे भी ज्यादा रोंगटे खड़े कर देने वाले इतिहास की शुरुआत हुई जब रासायनिक हथियारों का इस्तेमाल करके तकरीबन एक लाख खुर्दों की लाश बिछा दी गयी। बमों और तोपों के धूम-धड़ाकों से पटे इस संहार अभियान में महिलाओं और बच्चों तक की जान नहीं बच सकी। अपनी क्रूरता का यह नमूना पेश करके सद्दाम हुसैन अपने अन्दरूनी खतरों से एक प्रकार से निश्चिंत हो गये। इससे सद्दाम को तो इतना फायदा अवश्य हुआ कि इराक एक शक्तिशाली देश के रूप में उभरा जिससे मध्य-पूर्व के अन्य देशों क्या बात, बड़े देश भी खार खाने लगे। लेकिन सत्तारूढ़ कौम सुन्नी अरब को छोड़कर देश की शेष जनता दमन और उत्पीड़न की चक्की में लगातार पिसती ही चली गयी।

खाड़ी युद्ध ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि इराक की जनता मात्र भय और आतंक के मारे सद्दाम का समर्थन कर रही थी। विरोध की एकमात्र दवा सजा-ए-मौत थी जो अभी भी बरकरार है। इराक की मौजूदा हालातों को देखकर यह भी साफ जाहिर हो जाता है कि लोगों को इंतजार था तो सद्दाम हुसैन के कमजोर होने और किसी बाहरी शक्ति के समर्थन का जिससे विद्रोह के शोलों को जरा हवा मिले। विद्रोह की भावना तो अन्दर ही अन्दर काफी पहले से पनप रही थी जिसके उभरकर सामने न आ पाने की वजह सैनिक तानाशाही से ज्यादा विद्रोही गुटों का बिखरा होना था, इसलिए पनपते ही कुचल दिया जाता था और दूसरा विद्रोही गुट या तो तटस्थ रहता था अथवा सेना का मुखबिर बनकर अपने प्रतिद्वंद्वी को नुकसान पहुंचाता था जो अन्त में सेना के लिए ही फायदेमंद साबित होती थी।

लेकिन इस बार का विद्रोह पहले से भिन्न है। बहुराष्ट्रीय सेना के आगे घुटने टेककर इराकी राष्ट्रपति अपनी कमजोरी जाहिर कर चुके हैं और विद्रोहियों को तथा आस-पास के देशों को इसी दिन का इंतजार था। ईरान के लिए तो यह और भी खुशी की बात थी, इराकी सेना के डर से न तो ईरानी घुसपैठियों का इराकी सीमा में प्रवेश संभव हो पाता था न ही इराक में रह रहे ईरानी सभ्यता और रीति-रिवाज वाले लोग अपनी घुटन भरी जिन्दगी से उबर पा रहे थे। अमरीकी हस्तक्षेप ने मानो सबकी मुराद पूरी कर दी और युद्ध समाप्ति के एक सप्ताह बाद से ही सारे खुर्द बगावत पर उतर आये। इराकी सेना बहुराष्ट्रीय सेना के आगे ठठने की स्थिति में नहीं थी लेकिन इतनी कमजोर नहीं पड़ी थी कि अन्दरूनी झगड़ों से न निबट सके। इतनी ताकत इराक के पास अभी भी है कि अगर बाहरी हस्तक्षेप न हो तो यह विद्रोहियों को पहले की तरह असहाय बनाकर रख दे। इसलिए खून-खराबा करके ये विद्रोही अपने लिए पृथक स्वायत्त प्रान्त बनाने में तो सफल नहीं हो सकते हैं, होगा यही कि गृहयुद्ध की आग में जलता रहेगा और इराक की भी वही गत होगी जो १९७५ से लेबनान की हो रही है। एक ही बात विद्रोहियों के हित में है कि इस बार वे सब मिलकर विद्रोह पर उतर आये हैं और खाड़ी युद्ध से पस्त सैनिकों को एक साथ देश के कई मोर्चों पर जूझना पड़ रहा है। बौखलाहट में वे टैंकों और तोपों से खुर्द बस्तियों को रौंद रहे हैं जिसके चलते निहत्थे सामान्य नागरिकों को तुर्की और ईरान की शरण लेनी पड़ रही है। दूसरी ओर शांति और सुव्यवस्था बनाये रखने के नाम पर अमरीका ने भारी संख्या में अपनी स्थल और नौसेना इराक में रख छोड़ी है जो अप्रत्यक्ष रूप से विद्रोहियों का साथ दे रहे हैं। लेकिन उसके बावजूद अभी तक विद्रोहियों का ही पलड़ा हल्का पड़ रहा है। सद्दाम हुसैन ने हमेशा से खुर्दों के साथ सौतेला व्यवहार किया। जनरलों के ऊंचे-ऊंचे पदों पर राजधानी और उसके आस-पास के इलाकों में रह रहे अरब सुन्नियों को रखा तथा शेष प्रान्तों के निवासियों को सेना में भर्ती होने को मजबूर किया। जब तक युद्ध चला, मोर्चे पर डटे रहने के लिए उन्हीं प्रान्तों के सैनिकों को भेजा जाता रहा। यही वजह है कि सद्दाम हुसैन ने आज भी बहुराष्ट्रीय सैनिकों द्वारा बंदी बनाये गये सैनिकों की वापसी पर चुप्पी साध रखी है। वास्तव में ज्यादा भयभीत खुर्द समुदाय के वे युद्धबंदी ही हैं जो भली-भांति समझ रहे हैं कि स्वदेश लौटते ही उन्हें पंक्तिबद्ध खड़े करके गोली मार दी जायेगी। उन सैनिकों द्वारा आत्मसमर्पण कर दिये जाने से सद्दाम के जनरल बड़े नाराज हुए और वे हार के लिए खुर्द सैनिकों को दोषी ठहरा रहे हैं। यह पक्ष भी दो तरीके से इराक के अन्दर अपना रंग दिखा रहा है। एक ओर तो बचे-खुचे खुर्द सैनिक अप्रत्यक्ष रूप से अपने समुदाय के लोगों का साथ दे रहे हैं, दूसरी ओर इस नयी सुगबुगाहट से परेशान सद्दाम के विश्वासपात्र सैनिक फिर से रासायनिक हथियारों के इस्तेमाल पर उतर आये हैं। सद्दाम येन-केन-प्रकारेण यह दिखाना चाहते हैं कि देश में सर्वत्र शांति है ताकि इराक पर से आर्थिक प्रतिबंध हटा लिये जायें और उनके तमाम सैनिक ठिकानों पर तैनात अमरीकी फौज भी वापस लौट जाये। लेकिन लगता है उन्हें लेने के देने पड़ जायेंगे, क्योंकि नागरिकों पर रासायनिक हथियारों के इस्तेमाल के बाद जार्ज बुश चुपचाप नहीं बैठेंगे और फिर सद्दाम का अपना अस्तित्व भी खतरे में पड़ सकता है, क्योंकि वे फिलहाल इराक के किसी भी मामले में मनमानी नीति अपनाने की स्थिति में नहीं हैं जैसा कि विश्लेषकों का अभिमत है।

इस अन्दरूनी लड़ाई में विद्रोहियों के मनसूबे तो पूरे नहीं हो पायेंगे, उल्टे देश टुकड़े-टुकड़े होकर बिल्कुल बर्बाद हो जायेगा अभी तो चूंकि उनका एकमात्र लक्ष्य राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन को अपदस्थ करना है, इसलिए सब के सब एकट्ठ हो रहे हैं लेकिन वे सारे कई गुटों में बंटे हैं और उनका उद्देश्य अपने लिए अलग-अलग स्वतंत्र और संप्रभुम प्रान्त की स्थापना करना है। उन्हें स्वतंत्र प्रेस, विचारों की आजादी और संघ बनाने की छूट चाहिए लेकिन 'जनतंत्र' शब्द से उन्हें नफरत है। इस्लामी क्रांति की सर्वोच्च परिषद के संचालक शेख बेकर हाकिम का कहना है कि 'जनतंत्र' के नाम पर इराक में अत्याचारों का सिलसिला चलता रहा है, इसलिए इराक के राजनीतिक शब्दकोश से इस शब्द का लोप कर दिया जायेगा। पांच साल पहले खुर्द महाबाद गणतंत्र की स्थापना की असफल कोशिश करने वाले (जो ईरान में निर्वासित जीवन बिताकर युद्ध के बाद स्वदेश लौटे हैं) मसूद बरजानी और पैट्रटिक यूनियन ऑफ खुर्दिस्तान की स्थापना का ख्वाब देखने वाले जलाल तलबानी दोनों ही छापामार युद्ध-कला में प्रवीण हैं तथा अपने अभियान में जुट गये हैं। अगर ये सारे गुट अलग-अलग प्रान्त बना भी लें तो इतने कमजोर और सुरक्षित होंगे कि महाशक्तियों की बात तो दूर, अरब देशों के ही शोषण का शिकार बनना पड़ेगा। खासकर ईरान को तो मानो बहुत बड़ी जागीर मिलने की संभावना दिख रही है। सिर्फ अपनी थोथी महत्वाकांक्षा की रक्षा के लचर प्रयास के चक्कर में सद्दाम ने एक आबाद देश को बर्बादी के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया और बिना ज्यादा प्रयास के ही जार्ज बुश अपने लक्ष्य में सफल होने जा रहे हैं। कुवैत पर कब्जा जमाने वाले इराक की कुवैत से भी बुरी गत हो रही है।

शशिधर खां

